INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 14 | ISSUE - 11 | DECEMBER – 2024

दूधनाथ सिंह की कहानियों में पारिवारिक जीवन की छवियों का अध्ययन

महात्मा प्रसाद सिंह
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

डॉ. प्रेमशंकर शुक्ल
विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग
एस.आर.पी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय हनुमना, जिला मऊगंज (म.प्र.)

सारांश –

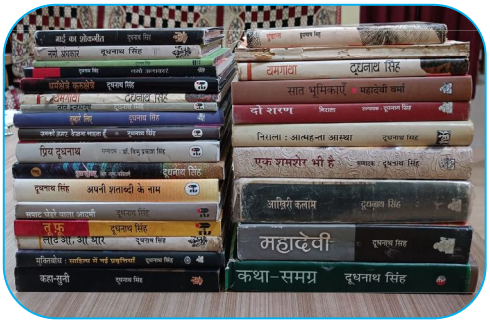

दूधनाथ सिंह की कहानियों में पारिवारिक जीवन की छवियाँ बहुत महत्वपूर्ण और सूक्ष्म रूप से चित्रित की जाती हैं। दूधनाथ सिंह ने अपने साहित्य में परिवार के भीतर के रिश्तों, संवेदनाओं और संघर्षों को बहुत नजदीकी दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियाँ न केवल पारिवारिक जीवन के संघर्षों को उजागर करती हैं, बल्कि समाज की बदलती स्थिति और मानवीय संवेदनाओं को भी गहरे तौर पर चित्रित करती हैं। दूधनाथ सिंह की कहानियाँ पारिवारिक जीवन के अंदर की जटिलताओं, रिश्तों के दबाव, और मनोवैज्ञानिक बदलावों को बहुत सटीक रूप से प्रस्तुत करती हैं। उनके लेखन में न केवल पारिवारिक रिश्तों की परतें खोली जाती हैं, बल्कि वे समाज के साथ इसके तालमेल को भी महत्वपूर्ण तरीके से चित्रित करते हैं। पारिवारिक जीवन की ये छवियाँ न केवल अपने समय के समाज का दर्पण हैं, बल्कि आज के परिवेश में भी उतनी ही प्रासंगिक हैं।

मुख्य शब्द – दूधनाथ सिंह, कहानियाँ, पारिवारिक जीवन एवं छवियाँ।

प्रस्तावना –

भारतीय भाषाओं के साहित्य पर भी इस व्यवस्था का असर दिखाई देता है। नायक–नायिका उच्चवर्ण के हों, इस दुराग्रह ने हमारे साहित्यकारों से दलित वर्ग के चित्रण को सदैव गौण एवं दयनीय स्थान दिलाया। आमतौर पर वे मनु द्वारा दी गई सामाजिक व्यवस्थाओं से बाहर निकल कर श्रेष्ठ, मानवतावादी एवं परिवर्तनवादी साहित्य लिखने का साहस ही नहीं जुटा पाए, अन्याय एवं शोषणपरक समाज व्यवस्था के हामी रहे।"[1]

इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए कथाकारों ने नारी समाज में व्याप्त उन समस्याओं पर कथाएं प्रस्तुत की है जिनके द्वारा नारी की दयनीय स्थिति स्पष्ट परिलक्षित होती है। सामान्यतः इन कथाकारों का स्वर सुधारवादी रहा है और इनकी अभिव्यक्ति पुरुष के अत्याचारों के विरोध में न होकर सामान्य तरीके से सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन की रही है। जिंदगी की बदसूरती पर 'टूटी कुर्सी' की नायिका नारी वर्ग के विचार को शब्द बद्ध करती है – "अब तक के जीवन सफर में यह सच्चाई मैं जान चुकी थी कि जिन्दगी में फूलों की, परियों की कोई जगह नहीं होती और ज्ञात नहीं होता कब जिन्दगी की बदसूरती का राक्षस मुट्ठी में दबा कर मसल

देता है।"[2] वह पाती है कि ससुराल में और आम जिन्दगी में जुल्म ही जुल्म है, मेहनत ओर बेइज्जती के अलावा और कुछ नहीं। वह घर के अन्दर बाहर व्यवस्था के मशीन में दबी, पिसी निस्सहाय नारी पात्र की गूंगी चीख, जबान खोले बिना, मन ही मन पूछती है , "आपके कानून में मेरे लिए क्या है? दहेज के लिए नरेश ले गया था, दहेज की खातिर चाचा लौटा लाना चाहते हैं और अब नरेश चाचा को उतना दहेज वापिस नहीं कर सकता, इसलिए मुझे अपने घर ले जाने को तैयार है "नहीं, मुझे माफ कीजिए मुझे इन दोनों से छुटकारा चाहिए। मैं आपके पाँव पड़ती हूँ जज साहिब।"[3]

विवाह की पुरातन पौराणिक धारणाओं को आज की नारी ध्वस्त कर रही है। अब विवाह मात्र से समझौता टूटता है तो संबंध भी टूट जाता है। विवाह व्यवस्था के प्रति आधुनिक नारी की सोच यह है कि वह एक पावन विधान नहीं, बल्कि एक व्यवसाय बन कर रह गया है और अन्य व्यवसायों की तरह इसमें सफल होने के लिए कुछ यत्न करने होते हैं। मृदुला गर्ग ने अपनी कहानी 'तुक' में विवाह को एक स्थिति बताया है जिससे नारी को सुरक्षा का लाभ होता है। इसमें पति का होना उसके लिए एक स्थिति है जिसके भीतर कुछ सुखदायी स्थितियाँ पैदा होती है–जैसे बच्चों का होना, घर का होना, घर में ढेरों काम का होना। पति का होना उसके लिए एक व्यवसाय है, जिसके माध्यम से उसे पैसा और व्यस्तता दोनों मिलते हैं। वह अपने जीवन की एकरसता तोड़ने के लिए पर पुरुषों से संभोग करने से भी नहीं कतराती है और किसी तरह के पाप बोध से घिर कर भी नहीं रहती है।

बीसवीं शताब्दी की भारतीय स्त्री पश्चिमी स्त्री से प्रभावित हुई है, पर यह प्रभाव मुख्य रूप से महानगर–केन्द्रित है या अति उच्च, सुसम्पन्न एवं सुशिक्षित परिवारों में ही परिलक्षित होता है, पर्वतीय और आदिवासी महिलाओं की स्थिति तो त्रिशंकु के समान है। वे पश्चिम का अनुकरण करना चाहती हैं, पर कर नहीं पाती और विशुद्ध भारतीय नारी बन कर जीना अब उनके लिए संभव नहीं है। अतः इस वर्ग की महिलाओं में अंतर्द्वन्द्व, संघर्ष और कुंठा अधिक मात्रा में है।"[4] भारतीय समाज में मान्यता है कि पत्नी पति से कम उम्र की होनी चाहिए। प्रतिमा वर्मा की 'संदेह' की नायिका इसी अपराध भावना का शिकार हैं। "बड़ी हो कौन कहता है.... .? आदमी का स्वर आश्चर्य में डूबा था, औरत रोती चली जा रही थी। मैं मैं जानती हूँ। मैंने तुम्हें धोखा दिया..... .।" पति के लिए उसका बड़ा होना बुरा नहीं, वह उसे स्वीकार कर रहा है, मगर नारी को फिर भी स्वयं में एक तरह का अपराध बोध घेरे हुए हैं जो उसको इस विभेद करने वाले समाज से ही प्राप्त हुआ है।

विश्लेषण –

दूधनाथ सिंह की कहानियों में परिवार के भीतर के रिश्ते जैसे पति–पत्नी, माता–पिता और बच्चों के रिश्ते जटिल और कभी–कभी तनावपूर्ण होते हैं। वे मानवीय संवेदनाओं, जैसे प्रेम, आक्रोश, समझौता और तकरार, को बहुत ही संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करते हैं। उदाहरण के लिए, उनकी कहानी गर्मी में परिवार के भीतर उत्पन्न होने वाले आंतरिक संघर्षों को दर्शाया गया है। यहाँ पर पारिवारिक जीवन के अलग–अलग पहलू जैसे अनबन, समझौतें और न समझ पाने की स्थितियाँ प्रकट होती हैं। दूधनाथ सिंह ने परिवार के जीवन में समाज और अर्थव्यवस्था के प्रभाव को भी गहरे तरीके से दिखाया है। उनकी कहानियों में समाज की बदलती धारा के साथ पारिवारिक जीवन के ढांचे में भी बदलाव आते हैं। उदाहरण के लिए, उनका संग्रह षविकलांगष एक ऐसी कहानी है जो इस बात को उजागर करती है कि किस तरह से बाहरी सामाजिक दबाव और पारिवारिक समस्याएँ एक व्यक्ति की मानसिकता और रिश्तों पर असर डालती हैं।

उनकी कहानियों में पारिवारिक जीवन के पहलुओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी देखने को मिलता है। दूधनाथ सिंह ने यह दिखाया है कि परिवार में एक व्यक्ति की मानसिकता और उसकी मानसिक स्थिति कैसे परिवार के अन्य सदस्यों के साथ रिश्तों को प्रभावित करती है। उनकी कहानी 'निराकार' में परिवार में अपने–अपने विचारों और भावनाओं के संघर्ष को बहुत गहरे तरीके से प्रस्तुत किया गया है। दूधनाथ सिंह की कहानियों में पारिवारिक जीवन के अंदर धार्मिक या आध्यात्मिक पहलुओं की भी झलक मिलती है, जहाँ पर परिवार के सदस्य अपनी आस्थाओं, परंपराओं और धार्मिक विश्वासों को एक दूसरे के साथ साझा करते हैं। उदाहरण के लिए, 'आध्यात्मिक शांति' जैसी कहानियों में यह देखने को मिलता है कि पारिवारिक जीवन में केवल भौतिक सुख–साधन ही नहीं, बल्कि आत्मिक शांति की आवश्यकता भी है।

कई बार दूधनाथ सिंह की कहानियाँ पारिवारिक जीवन के संघर्षों को उभारती हैं, लेकिन वे इन संघर्षों के समाधान की दिशा में भी संकेत देती हैं। उनका लेखन यह दिखाता है कि परिवारों में अक्सर समस्याएँ आती हैं, लेकिन समाधान का रास्ता संवाद, समझदारी और आपसी सहमति से ही निकलता है। दूधनाथ सिंह की कहानियों में स्त्री के स्थान और भूमिका को भी महत्वपूर्ण रूप से चित्रित किया गया है। वे यह दिखाते हैं कि परिवार में महिला के योगदान को कैसे नजरअंदाज किया जाता है और उसकी भूमिका को कैसे समाज द्वारा सीमित किया जाता है। उनकी कहानी एक अनकहा सच में महिला के संघर्षों और उसकी जिजीविषा को प्रभावशाली ढंग से दिखाया गया है।

परिवार के ढाँचे पर अभी भी रूढ़िवादी धारणाओं का गहरा प्रभाव है। एक ही परिवार में बेटे और बेटी के पालन–पोषण में अन्तर से आरंभ से ही लड़कियों में अलग तरह के संस्कार पनपने लगते हैं। वे अपने ही भाई की तुलना में अपने को हेय समझने लगती हैं। कथाकार इस प्रथा के प्रति विद्रोह प्रकट करते हैं जो कि समान अधिकार भावना की बजाय, अपने अधिकारों को त्यागने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देती है। यह भावना लड़कियों में खास तरह का संस्कार विकसित करती है। घरेलू कार्यों में भी लड़कियों और लड़कों में फर्क किया जाता है। लड़की को रसोई के कामों में जुटाया जाता है तो लड़को को बाहर के कार्यों में, ये संस्कार ही बाद में रूढ़ रूप ले लेते हैं। स्वयं माताएं अपनी पुत्रियों को वैसी शिक्षा देती हैं। घर में अपनी माँ की स्थिति लड़की के लिए आदर्श बन जाती है। नारी की इस असंतुलित स्थिति पर विचार करते हुए आशा रानी व्होरा ने एक जगह लिखा – "वैदिक काल में शास्त्रार्थ करने वाली विदुषी महिला धीरे–धीरे अशिक्षा के अंधकार में डूबती चली गई। आम स्त्री स्वतंत्र प्रेम और चुनाव का अपना अधिकार खोकर मानसिक गुलामी और शारीरिक शोषण का शिकार हुई।"[5]

स्त्री के पुरुष मित्रों को आज भी समाज सहज रूप में स्वीकार नहीं करता। वस्तुतः आज के पुरुष की सारी उदारता एवं आधुनिकता अधिकांशतः वैचारिक धरातल तक ही सीमित है। आज उच्च शिक्षा तथा स्वावलंबन के बावजूद एक मध्यमवर्गीय परिवार की स्त्री के सामाजिक तथा नैतिक मूल्य वही हैं, जो वर्षों से चले आ रहे हैं। जीवन के प्रति उनके दृष्टिकोण में आज भी कोई बदलाव नहीं आया है। आज भी शहरों, कस्बों, महानगरों तक की असंख्य युवतियाँ विवाह को अपने जीवन की एकमात्र नियति मान कर जाने–अनजाने इसी की प्रतीक्षा करती रहती है। अधिकांश शिक्षित स्त्रियों का जीवन आम घरेलू स्त्रियों की भाँति पति और बच्चों के सीमित दायरें में सिमट कर रह जाता है। ममता कालिया ने एक स्थान पर लिखा है – "मेरे जीवन में कभी कुछ नहीं घटा, सिवाय दो बच्चों और दो गर्भपात के।"

स्त्री सेक्स और सामाजिक ढाँचे में विद्रोह करने और अपने अस्तित्व की स्वतंत्र स्थिति प्रमाणित करने के बावजूद 'समर्पिता' की मुद्रा से नहीं उबर पायी हैं ..... सारे आधुनिक आयोजन और पूरी–पूरी बौद्धिक खुराक के होते हुए भी, वह आत्मपरायण भारतीय नारी की परंपरा को अपने रक्त में ढोए जा रही है।"[6]

दूधनाथ सिंह ने पारिवारिक जीवन की छवियाँ कथान्तर्गत यह स्पष्ट किया है कि भारतीय समाज में नारी का जितना शोषण हुआ है, उतना संभवतः अन्य किसी समाज में नहीं हुआ होगा। नारी के शोषण का हमारे समाज में मुख्य कारण है धार्मिक कर्मकांड, आर्थिक रूप से नारी की पराधीनता, परिवार में पितृ–सत्तात्मकता, कुलीन विवाह, संयुक्त परिवार, अशिक्षा, जड़ता और नारी का गलत समाजीकरण आदि।

दूधनाथ सिंह की कहानियों में पारिवारिक जीवन के छवियाँ अनेक स्थलों पर अवलोकनीय हैं। 'स्वर्गवासी' कहानी में पारिवारिक जीवन की छवियाँ इस प्रकार झलकती है – श्रीकृष्ण लाल "सारे विवाहित जीवन में अँधेरी–रातों में तूफान की तरह आता और ओले–पानी बरसा कर शान्त भाव से मुस्कराता हुआ चला जाता था। इस तरह उसने छः सन्तानें पैदा की थीं और सातवाँ आने–वाला था ... लेकिन आज की उसकी वह मुस्कुराहट किसी विजेता की मुस्कुराहट से कम नहीं थी। सुखी, यशस्वी, निर्द्वन्द्व और अन–आहत। जैसे इस बार वह कारूँ का खजाना लेकर ही लौटेगा। .... लेकिन स्टेशन पहुँचने पर उसकी गाड़ी छूट गयी थी। वह दरी–तकिये का बण्डल वहीं एक पान की दुकान पर छोड़कर घर लौट आया था और दुबारा खाने की फर्माइश की थी। फिर वह निर्द्वन्द्व भाव से सो गया था, जैसे वह यात्रा से लौट आया हो–सफल होकर और अब सुखपूर्वक थकान मिटा रहा हो ...।[7]

'शिनाख्त' कहानी के अन्तर्गत लेखक ने पति कालेज में होंगे, माँ प्रार्थना भवन गयी होंगी, बच्चे सो गये होंगे और नौकर अपने घर गया होगा। उन शुरू–शुरू के दिनों में उसके इतने सफल और निर्भीक प्रबन्ध से मैं

चकित रह जाता था। बाद में मैं अभ्यस्त हो गया था और सच पूछा जाय तो मुझे इसमें धोखे–धड़ी और अतिरिक्त चतुराई की बू आने लगी थी। अक्सर मैं यह सोचने पर मजबूर हो जाता कि ऐसे कामों में इतनी सजगता अत्यन्त 'अनुभवी' और 'फाहशा' औरतों में ही हो सकती है।[8]

पतिव्रत धर्म के संदर्भ में कथाकार ने कथा–प्रसंगों का उल्लेख करते हुए लिखा है – उसने भय को साबित करने के लिए कंधे दो–एक बार सिकोड़े और मुस्करा पड़ी। मेरे मन में एक साथ कई बातें आयीं। क्या वह दोनों की पुरानी मूर्खताओं को याद करके मुस्करा रही थी? या वह इस बात से खुश थी कि आखिरकार मैं हार गया था और मुझे आना ही पड़ा था। या यह कि मैंने उसके बारे में कितनी गलत बातें सोची थीं और अब अपराधी की तरह उसके सामने खड़ा था। तो क्या वह मेरे प्रति अपना 'पातिव्रत्य' प्रमाणित करेगी? किस तरह? मैने उसे क्यों पुकारा था, मैं अधीर होने लगा। अगर उसने इन्कार कर दिया या टाल दिया तो? कितनी भयावह ऊब मुझे घेर लेगी? क्योंकि अब बिल्लियों की तरह लड़ना मुझे बिल्कुल गवारा नहीं था। ऐसा कुछ भी करना वक्त बर्बाद करने के अलावा कुछ भी नहीं होगा। और मैं इस तरह की 'वक्त–बर्बादी' में अब कतई रुचि नहीं रखता था। क्या वह भी यह बात नहीं समझती होगी? यह सोचकर मुझे हँसी आ गयी।[9]

परिवार के सदस्यों में माँ की अहम भूमिका होती है। इस तथ्य को लेखक ने इस प्रकार उद्घाटित किया है – मेरी दिनचर्या सिर्फ गुर्राने, गुस्सा होने और अपने स्वास्थ्य के प्रति आकर्षित होते रहने तक सीमित हो गई। शेव करके मुझे अच्छा लगने लगा। अब बालों की चमड़ी खींच–खींच कर खुरचना नहीं पड़ता था। मैंने अपनी आँखों में एक अजीब–सी मादकता लक्ष्य की। मैं मुग्धभाव से अपने को ही निरन्तर तकने लगा। वह एक भयावह किस्म का मनोरंजन था। क्योंकि इसी मनोरंजन में लिप्त, आह्लादित, शान्त और मुस्कुराता हुआ अचानक मैं माँ के द्वारा पकड़ लिया गया।[10]

इसी कथा प्रसंग को अग्रगामी करते हुए दूधनाथ सिंह ने पारिवारिक जीवन की छवियों के अन्तर्गत माँ और पिता का प्रकृत रूप इस प्रकार प्रदर्शित किया है – अचानक मेरी नजर दीवार की ओर चली गई। वहाँ माँ खड़ी थीं। मुझे अपनी ओर देखता पाकर वे मुस्काई। यह मुस्कुराहट उनके चेहरे से वर्षों पहले गायब हो गयी थी। उसकी कोई यादगार मुझे नहीं थी। अतः उसका लौटना उनके चेहरे को डरावना बना रहा था। वे अपनी सफलता पर खुश हैं–मैंने सोचा। इसीलिये इतनी डरावनी हँसी हँस रही हैं। क्या वे सचमुच इतने स्वार्थी हो गयी हैं? क्या वे दुनिया से इस कदर डर गयी हैं? क्या मेरे पिता के नष्ट होने का डर उन पर इस तरह हावी है? आखिर क्या बात हो सकती है, जो उन्होंने मुझे इस तरह...? मैंने कुर्सी उनकी तरफ घुमा ली। ठीक है – पता तो लगे कुछ। मैंने अपने को संयत किया और थोड़ा कठोर।[11]

पारिवारिक जीवन को छवियों के अनन्त स्वरूप सृजित और विसर्जित होते हैं। यथा पत्नी कभी–कभार मेरे लौटने की प्रतीक्षा में बच्चों के पास सो भी जाती, माँ सदा दीवार की टेक लगाये, अँधेरे में आँखें फाड़े घूरती रहतीं। फाटक की खटक होती। वे एक बार देखकर निश्चय कर लेतीं कि मैं ही हूँ और उठकर चौके में चली जातीं। तवा चढ़ातीं और रोटियाँ बेलने लगतीं। शायद वे जाते–जाते पत्नी को जगा जातीं। वह कुछ भी नहीं कहती। सिर्फ मेरे कमरे में घुसते ही एक बार दीवाल–घड़ी की ओर देख लेती। यह केवल एक सर्द इशारा होता कि 'देख लो, तुम कितने गैरजिम्मेदार हो–कितने क्रूर। तुम हमारी किस तरह उपेक्षा कर रहे हो और तुम्हें पता भी नहीं। इस वक्त देख लो, क्या बजा है। रात के बारह या एक डेढ़ या पौने तीन या चार और तुम्हारी प्यारी अम्माजी अब तुम्हें ताजी–ताजी रोटियाँ पका कर खिलायेंगी। फिर हम सबके मुँह में अन्न का दाना जायेगा। फिर तुम पलंग पर पसर जाओगे और सुबह नौ बजे तक खुर्राटे भरते रहोगे। फिर तुम उठोगे और बेड–टी लोगो और फुर्ती से कपड़े पहन गायब हो जाओगे।' ... अपनी सारी खीझ और सारे उलहने वह इसी तरह चुपचाप दीवाल–घड़ी की ओर देखकर निकाल देती। कभी–कभी माँ चौके की दीवार से टिकी–टिकी ऊँघती होतीं। कमरे में घुसते ही कोई लावारिस कुत्ता तीर की तरह निकल कर भागता और तेज रोशनी में माँ के सुफेद चेहरे की झुर्रियाँ निस्पन्द पड़ी हुई दिखतीं..... ।[12]

'प्रतीक्षा' कहानी के अन्तर्गत लेखक ने पारिवारिक जीवन की छवियों को इस प्रकार उद्धृत किया है – वे मजूर लोग सीधे–सादे लोग थे। वे माँ के झाँसे में नहीं आने के। या तो वे भूल गये होंगे, या उन्होंने इसको इतनी गम्भीर बात न समझा होगा। लेकिन कभी–न–कभी इसकी चर्चा तो वे छेड़ेंगे ही। ठीक है, मैं भी कोई जल्दी में नहीं हूँ। उन्हें याद आने दो और इस सच्ची अपवाह को धीरे–धीरे फैलने दो... ।[13]

बच्चे परिवार के अभिन्न हिस्सा होते हैं। इस प्रसंग में लेखक ने बाल्य आमोद को निम्नानुसार प्रतिपादित किया है – मेरे बच्चे भी बड़े हो रहे हैं। इसका अहसास तब होता है जब वे अपने बड़े–बड़े बूट पटकते हुए बरामदे से गुजरते हैं। या उनके संकोचशील और सधे हुए कंठ–स्वर से। अब उनका लड़ना–झगड़ना और हुड़दंग मचाना बहुत कम सुनाई पड़ने लगा है। उन्हें मालूम है और शायद अनजाने ही वे दुःखी भी हैं। या सकते में आ गये हैं और सहमे हुए हैं। मुझे लेटे–लेटे आशा बँधती है–घबराओ नहीं, तुम्हारा यह दुःस्वप्न बहुत जल्दी खत्म होने को है। वे तुम्हारे रक्त से पैदा हुए हैं। उन्हें जरूर तुम्हारी तकलीफों का अहसास होगा। वे कुछ–न–कुछ करेंगे। हो सकता है वे किसी दिन अपने स्कूल में जाकर यह खबर फैला दे। शायद एक रहस्यमय घटना की तरह। शायद एक काल्पनिक कहानी की तरह। फिर यह बात बच्चों में फैल जाय और फिर उनके घर तक। फिर बच्चों के माता–पिता इसमें अपने–आप रुचि लेना शुरू कर देंगे।[14]

हालाँकि बेचारी..... माँ काफी बूढ़ी हो गयी है। उनकी झुर्रियों में अब एक रोब की जगह असहायता झलकती है। वे डगर–मगर चलने लगी हैं। उनकी आवाज मद्धिम और दयनीय हो गयी है। वे दिन का अधिकांश भाग सोती रहती हैं। वे न रहें। मान लो कल ही वे चल बसें। तो मेरी बीवी क्या करेगी। तब पट्टी को मालूम होगा। उसे ये दीवारें तुड़वानी पड़ेंगी। उसे यह काम रातों–रात करना पड़ेगा। सुबह सारे लोग इकट्ठे होंगे। सारे परिचित और रिश्तेदार और स्नेहीजन। पिता के वे सारे दोस्त जो अभी भी गाँधी टोपियाँ लगाते हैं। वे मुझे देखकर खुश होंगे। मेरा स्वास्थ्य और मेरा चुप और मेरा सुखी दैनंदिन जीवन। ठीक है, अब इस वक्त एक नींद ले ली जाए। माँ को भी सोने दो .... और इन्तजार करो। वह दिन शायद दूर नहीं है।[15]

पारिवारिक छवियों की दृष्टि से कथाकार की सुखान्त कहानी अप्रतिम लगती है – बाहर पत्नी ने एक रेकार्ड लगा दिया है। ....'पाप्पा, ही लव्ज मामा। माम्मा, शी लव्ज पापा.....' मरे बच्चे उसे दुहरा रहे हैं और पत्नी गदगद हो रही है। उसकी आँखें चमक रही है और वह निश्चिन्त है। उसकी दुनिया भरी–पुरी है। मेरी लड़की कमर मटका कर नाच रही है। उसकी दादी मगन भाव से उसे डाँट रही है और पोपले मुँह मुस्कुरा रही है ..... पाप्पा ही लव्ज मामा.... माम्मा शी लव्ज पाया ... तर ता ता तरा तर तात ता ... पाप्पा.....। और मैं यहाँ चुपचप, धीरे–धीरे धरती को कुरेद रहा हूँ। कहाँ हैं वे औरतें जो अपने पत्तियों को 'डेजर्ट' करके चली जाती हैं। यह मुझे कभी 'डेजर्ट' नहीं करेगी। कभी नहीं। कहानियों और उपन्यासों से मिली हुई सूचनाएँ कितनी गलत निकलीं। वे औरतें सचमुच क्या कहीं हैं जो अपने पत्तियों को मुक्त करके चली जाती है और फिर कभी वर्षों बाद अचानक कहीं सरे–राह मिल जाती हैं–एक पछतावे की तरह। सूखी, उदास और खोई हुई–सी। इसे देखो। यह कितनी प्रफुल्ल हैं! अपनी सफेद साड़ी में उमगती हुई। एक कटार की तरह तेज–तर्रार। अपनी चकमक से चौंधा लगाती–सी। गम्भीर और मगन। 'पाप्पा, ही लव्ज मामा... माम्मा, शी लव्ज पापा...।' तो यह अपने पातिव्रत्य से थकी नहीं है। उसके प्रति निश्चिन्त है। यह रेकार्ड मिस्टर रामपुर हाउण्ड ने मेरी पत्नी को भेंट किया था। मिस्टर रामपुर हाउण्ड, तुम्हें वहम था कि मैं बड़ा गैरजिम्मेदार था। लेकिन तुम्हारी लही नहीं। अब तुम्हें इससे ठीक उलटा वहम होगा कि हम बड़े सुखी हैं। मैं बड़ा जिम्मेदार और अच्छा व्यक्ति बन गया हूँ और मेरी पत्नी से मेरी खूब पटती है और हमारा घर बड़े सहज भाव से चल रहा है। मिस्टर रामपुर हाउण्ड, तुम्हारी ईर्ष्या बेकार है। वह सिर्फ तुम्हारा रेकार्ड बजा रही है। मैं स्वस्थ हूँ और अपने नाखूनों से गढ़ा खोद रहा हूँ। इन दीवारों के नीचे से एक सुरंग निकालने के लिए और मेरे नाखून घिस रहे हैं और मेरी उँगलियों में दर्द हो रहा और मुझे वक्त का बिल्कुल पता नहीं।[16]

पारिवारिक जीवन की छवियों का अद्वितीय वर्णन पाठकों का सहज ही मन मोह लेता है। बालक का कथन पिता की मनोवृत्तियों की ओर संकेत कर रहा है। "बचपन में पिता थे जो मुझे फ़ेन–भरी बारिश दिखाते–"गुलू! वो देख, बारिश आ रही है।" उनकी विशाल भुजाएँ, जिन पर घने काले बाल थे, बारिश की ओर उठ जातीं जैसे वे बारिश को उँगली में पकड़कर खींच रहे हों। मक्के के खेत में बीचोबीच ऊँचा एक फूस का मचान होता। दूर पश्चिम या पूर्व से धीरे–धीरे पाँव–पाँव झमकती, झाग–भरी बारिश की लोच दिखती ..... गाँव डुबाती, फिर आम और कटहल के बाग, फिर हरे–हरे खेत, झूमते बबूल ओर बंसवारियों के कुंज, फिर नदी का वक्ष। खेत के सिरे पर आते–आते मक्के के पौधों पर बारिश का शोर जब सुनाई पड़ता तो मैं ताली पीट–पीटकर चिल्ला पड़ता, "बारिश आ गयी..... बारिश आ गयी" और क्षण भर में हमारा खेत बारिश की उजली चादर में गुम हो जाता। हम देखते, फिर उसके बाद बारिश का जाना। खेतों, घरों, बगीचों का

धुल–धुलकर गहराते हुए फिर–फिर उगना....। ऐसा कभी–कभी रात में भी होता। जब या तो मैं माँ की गोद में पड़ा–पड़ा जागता रहता था, या पिता के साथ फूस के मचान पर होता। माँ को नींद बहुत आती थी।[17]

निष्कर्ष:

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि दूधनाथ सिंह की समग्र कहानियों में सामाजिक जीवन के विविध परिदृश्य अंकित हैं। पारिवारिक जीवन की छवियों के क्रम में माता–पिता, कुटुम्ब के वृद्धजनों, पारिवारिक सदस्यों पति–पत्नी, बालकों इन समग्र रिश्तों का सम्यक विवेचन मिलता है। इन रिश्तों के माध्यम से लेखक ने पारिवारिक तनाव के साथ, पारिवारिक राग के दृश्यों का भी यत्र–तत्र वर्णन किया है। दूधनाथ सिंह का कहानी जगत पारिवारिक जीवन की छवियों से मण्डित है। इन कथा प्रसंगों के माध्यम से लेखक ने अपने कथन के माध्यम से कहानी कला को सोद्देश्यपरक तथा प्रतिष्ठापरक बना दिया है।

संदर्भ –

[1] डॉ. कुसुम – हिन्दी उपन्यास और दलित नारी, पृष्ठ 1
[2] नरेन्द्रमोहन, बदीउज्जमा – टूटी कुर्सी, कुसुम अंसल, व्यवस्था विरोधी कहानियाँ, पृष्ठ 19
[3] नरेन्द्रमोहन, बदीउज्जमा – टूटी कुर्सी, कुसुम अंसल, व्यवस्था विरोधी कहानियाँ, पृष्ठ 19
[4] डॉ. शंकर प्रसाद – सामाजिक उपन्यास और नारी, पृष्ठ 21
[5] नारी शोषण आइने और आयाम, पृष्ठ 18
[6] नई कहानी, प्रकृति और पाठ, पृष्ठ 33.
[7] दूधनाथ सिंह – सुखान्त–स्वर्गवासी, पृष्ठ 17
[8] दूधनाथ सिंह – सुखान्त–शिनाख्त, पृष्ठ 36
[9] दूधनाथ सिंह – सुखान्त–शिनाख्त, पृष्ठ 37–38.
[10] दूधनाथ सिंह – सुखान्त, पृष्ठ 111–112
[11] दूधनाथ सिंह – सुखान्त, पृष्ठ 112.
[12] दूधनाथ सिंह – सुखान्त, पृष्ठ 117
[13] दूधनाथ सिंह – सुखान्त, पृष्ठ 125.
[14] दूधनाथ सिंह – सुखान्त, पृष्ठ 125–126
[15] दूधनाथ सिंह – सुखान्त, पृष्ठ 126.
[16] दूधनाथ सिंह – सुखान्त, पृष्ठ 159–160
[17] दूधनाथ सिंह – सपाट चेहरे वाला आदमी, पृष्ठ 170–171